आँचलिक उपन्यास का स्वरूप एवं लक्षण

Dr. K. M. Trivedi
Associate Professor in Hindi
Smt. B. V. Dhanak College, Bagasara

किसी भूखण्ड, क्षेत्र या अँचल विशेष के उस जीवन का अध्ययन या चित्रण जो उसकी समग्र क्षेत्रीयता का द्योतक हो, आँचलिकता है और अँचल के भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक सीमाबद्ध खास क्षेत्र के सामान्य जीवन सत्यों के अन्तर या एकरुपता का निदर्शन करना; आँचलिक उपन्यास का आदर्श है। यों तो प्रत्येक उपन्यास किसी स्थान, किसी काल, किसी संस्कृति या किसी संस्कार-विशेष के लोगों को लेकर लिखा जाता है, किन्तु आँचलिक उपन्यास में इन सबका चित्रण होते हुए भी; वह अन्य उपन्यासों से भिन्न है। आँचलिक उपन्यास एक ही प्रकार के परिवेश में, क्षेत्र विशेष का सत्य उद्घाटित है। वह पात्रों के स्थान पर क्षेत्र-विशेष की सम्पूर्ण जनसंख्या को लेता है; उसके पात्र ईकाई या 'कर्म विशेष' न होकर वर्ग विशेष होते है; उस क्षेत्र विशेष की जीवन-प्रथाओं के विभिन्न स्तरों, विभिन्न प्रकारों तथा पृथक-पृथक दलों का प्रतिनिधित्व करते हैं। देश, काल, जाति, धर्म, भौगोलिक स्थिति, आर्थिक प्रणाली, सामाजिक संघटन, रीतिनीति, भाषा आदि से निर्मित क्षेत्रीय-जीवन को आलेखना ही आँचलिक उपन्यास का विषय हैं। भौगोलिक सीमा, इतिहास संस्कृति, जाति, धर्म, भाषा, रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान आदि खण्ड़गत या क्षेत्रीय है।

आँचलिक उपन्यास अन्य उपन्यासों से अलग हो जाता है। जहाँ सामान्य उपन्यासों में क्षेत्रीय जीवन का आँचलिक वातावरण दिए बिना ही या गौण रूप से इसका प्रयोग कर हम चरित्र विकास में विश्व जीवन के सर्वमान्य सत्य का संघटक खोजने का प्रयास करते हैं; वहाँ आंचलिक उपन्यासों में विशिष्ट आँचलिक वातावरण में दिन-प्रतिदिन की सामान्य घटनाओं तथा वर्ग-विशेष के प्रतिनिधि पात्रों की जीवन प्रक्रिया के माध्यम से एक खास भौगोलिक संस्कृति का उद्घाटन वांछनीय स्वीकारते हैं। इस प्रकार आँचलिक उपन्यास में प्रत्येक घटना उसका प्रत्येक क्रम और पात्र की हर प्रक्रिया भौगोलिक सीमान्त की परिचायक होती है।

परिवार, ग्राम, प्रदेश, राज्य, विश्व तथा सामाजिक प्रथाएँ, व्यक्ति और समूह की समस्याएँ, आर्थिक परिस्थितियाँ राजनीतिक विचारधाराएँ, दार्शनिक सिद्धांत आदि अनेक विषय हैं; जिनमें किसी या किन्हीं को उपन्यास में प्रधानता दी जा सकती है। कुछ उपन्यासों में किसी प्रदेश विशेष का यथा तथ्य और बिम्बात्मक चित्रण प्रधानता प्राप्त कर लेता हैं और उन्हें प्रादेशिक या आँचलिक उपन्यास कहा जाता है। आँचलिक उपन्यास का लक्ष्य, सम्पूर्ण भौगोलिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करना है और यह प्रतिनिधित्व किसी क्षेत्र की चित्रगण वास्तविकता भर प्रस्तुत करने से नहीं हो सकता मनुष्य जिस भूखण्ड़ में रहता है, उसकी विशिष्ट भौगोलिकता के अनुरूप अपने को ढ़ालकर उसके साथ सामंजस्य स्थापित करता है और संस्कृति तथा सामाजिकता की एक खास पद्धति तैयार करता है। अँचल के दैनिक जीवन की कहानी कहना आँचलिक उपन्यासकार का दायित्व हैं। अँचल की भौगोलिक संस्कृति के वातावरण में होनेवाले मानवीय कार्यकलापों को यथोचित घटनाओं के रूप में लेकर इनको सभ्यता के ऐतिहासीक तथा वैज्ञानिक विकास की कसोटी पर परखकर एक सांस्कृतिक दृष्टिकोण तैयार करना आँचलिक उपन्यासकार का लक्ष्य है।

डॉ.रामदरश मिश्र का विश्वास है कि आँचलिक उपन्यासकार अँचल के जीवन का भोक्ता या निकटदृष्टा होता हैं, उसका सारा देखना 'अनुभव की सीमा' में होता हैं। वह किसी भू-भाग में कसमसाती जीवनानुभूति को शब्द देता है। जैसे नयी कविता ने तीव्रता से, सच्चाई से भोगे हुए

अनुभव की भट्ठी में तपे हुए पात्रों को व्यंजित करने में ही कविता की सुन्दरता देखी, वैसे ही उपन्यास के क्षेत्र में आँचलिक उपन्यासों ने अनुभव हीन सामान्य या विराट के पीछे ने दौड़कर अनुभव की सीमा में आनेवाले अँचल विशेष को उपन्यास का क्षेत्र बनाया । आँचलिक उपन्यासकार जनपद-विशेष के लिए जिया होता है या कम से कम समीप दृष्टा होता हैं। वह विश्वास के साथ वहाँ के पात्रों, वहाँ की समस्याओं, वहाँ के सम्बन्धों, वहाँ के प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश के समग्र रूपों, परम्पराओं को अंकित करता है। आँचलिक उपन्यास लिखना मानो हृदय में किसी-भू-भाग की कसमसाती हुई जीवनानुभूति को वाणी देने का अनिवार्य प्रयास है । आँचलिक उपन्यास अपेक्षाकृत उन्मुक्त व विराट कैन्वास पर अँचल की जीवन समग्रता को उद्घाटित करता है। उसके निकट अँचल पृष्ठ फलक से अधिक मूर्तिमान व्यक्तित्त्व है।

डॉ.गोविन्द त्रिगुणायत का मत है कि-"जिन उपन्यासों में स्थान विशेष के सम्पूर्ण वातावरण का सारगर्भित और निष्कपट रूप से स्थानीय विशेषताओं के साथ चित्र प्रस्तुत किया जाय, उन्हें आँचलिक उपन्यास कहेंगे।"[१] इसका अर्थ यह है कि आंचलिक उपन्यास का एक लक्ष्य वातावरण तथा स्थानीय विशेषताओं का समन्वय करना है, किन्तु इस 'लक्ष्य' में पूर्णता तभी आयेगी जब ये देश-काल व वातावरण उपन्यास का तत्वभर न रहे । श्री धनंजय वर्मा के अनुसार उपन्यास में लोकरंग को उभारकर किसी अँचल विशेष का प्रतिनिधित्व करनेवाले उपन्यासों को आँचलिक उपन्यास कहा जाता है । डॉ.लक्ष्मीकान्त सिन्हा आँचलिक उपन्यास को 'परिचय की घनिष्ठता का गद्य-प्रबन्ध' कहते हैं। उनका विश्वास है कि "आँचलिक उपन्यास में सीमा देश की है। उसका सांस्कृतिक पक्ष एक विशिष्ट भूमिखण्ड़ का होता है, लेकिन संस्कारों में भाव और भावनाओं में यह कण में ब्रह्माण्ड़ को दिखाना चाहता है । वे उसे सभ्यता का देहातों की ओर प्रत्यावर्तन भी कहते हैं।"[२]

इन सभी परिभाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि आँचलिक उपन्यास एक स्वस्थ, नव्य तथा भव्य विधा हैं। इसका मुख्य उदेश्य किसी अँचल की क्षेत्रीय या खण्ड़गत संस्कृति का निरूपण करना है; उसकी भौगोलिक या सांस्कृतिक सीमाबद्धता में हिन्दी के प्रायः अधिकांश आँचलिक उपन्यास पिछड़े प्रदेशों तथा उपेक्षित जातियों पर लिखे गये हैं। उनमें भी अपरिचित और उपेक्षित भूमि पर लिखे गये उपन्यासों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक हैं। अर्थ यह होता है कि आँचलिक उपन्यास का सारा बल प्रादेशिकता या क्षेत्रीय-जीवन के चित्रण पर है।

अधिकांश आँचलिक उपन्यास अँचल की समग्र क्षेत्रियता को चित्रित करने के लिए देश-काल के यथार्थ वातावरण में यथार्थ चित्रण के साथ लिखे गये हैं, किन्तु उसमें कुछ कृतियाँ पूर्णतया आँचलिक है और कुछ में अंशगत आँचलिकता है। इसका कारण बताते हुए कहा है कि प्रायः सभी उपन्यासकारों ने अपने आदर्श की पुष्टि या विचारधारा की प्रतिस्थापना के लिए अँचल के खण्ड़गत जीवन को प्रश्रेय दिया है, जबकि आँचलिक चित्रण में अँचल को समग्रता के साथ निरूपित किया जाना चाहिए। इसी प्रकार आँचलिक पृष्ठभूमि दो प्रकार में विभाजित हुई है-

१. निष्क्रिय और

२. सक्रिय

आँचलिक पृष्ठभूमि के इन दोनों रूपों का सूक्ष्म भेद न समझे जाने के कारण प्रायः अँचल को परिवेश बनाकर लिखे गये उपन्यासों को आँचलिक उपन्यास समझे जाने का भ्रम हुआ है। जिन लेखकों के सम्बन्ध में भ्रम सशक्त हैं, उनमें हिन्दी में प्रेमचन्द के समान अंग्रेजी में हार्डी और बंगला में शरतचन्द्र का नाम उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी साहित्यकोश में आँचलिक उपन्यास का लक्षण देते हुए लिखा हैं। "...कुछ उपन्यासों में किसी प्रदेश-विशेष का यथा तथ्य और बिम्बात्मक चित्रण प्रधानता प्राप्त कर लेता है और उन्हें प्रादेशिक या आँचलिक उपन्यास कहा

जाता है। परन्तु ये उपन्यास भी सामाजिक या ऐतिहासिक ही होते हैं और चारित्रिक के अन्तर्गत आते हैं; क्योंकि पात्रों के चरित्र चित्रण को जीवन्त रूप में चित्रित किया जाता हैं।"[३]

डॉ. ब्रजभूषण सिंह 'आदर्श' ने अपने शोध ग्रंथ में हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में राजनीतिक तत्त्व मुख्य बताया है; जो आँचलिक जीवन, प्रकृति, इतिहास और भाषा की अनेक प्रवृत्तियों को लेकर चलता है। उन्होंने वहीं पर लिखा है कि- "उपन्यासकार की महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय संवेदना आँचलिक उपन्यासों के कलात्मक यथार्थवादी शिल्प में वहाँ के अनछुए मार्मिक सौंदर्य और उसकी परम्परा में जुड़ी हुई अनेक घटनाओं, वहाँ के जीवन-आदर्शों का सहज स्वाभाविक, अद्भुत चित्रण करती है, क्योंकि आँचलिक उपन्यासकार प्रायः अँचल-विशेष को ही अपनी कृति में स्थापित करते हैं । इस प्रकार उनकी संवेदना मातृभूमि के विशेष महत्त्व से आवेष्टित एवं अनुभूत होती है और वहाँ कल्पना जैसी वस्तु की अपेक्षा अकृत्रिम यथार्थ ही उपन्यास की कथावस्तु बनता है। अतएव ऐसे उपन्यासों की क्षेत्रीय मौलिकता उन्हें क्षेत्रीय एवं देशीय अथवा राष्ट्रीय लोकप्रियता का विशिष्ट उपहार देती हैं।"[४] इसका अभिप्राय यह हुआ कि आँचलिक उपन्यास में आँचलिकता की धारणा प्रमुख नहीं हैं, राष्ट्रीयता मुख्य मानी गई है।

श्री महेन्द्र चतुर्वेदी ने आँचलिक उपन्यास की सिद्धियाँ तीन दिशाओं में निरूपित करके बतायी हैं। (१) स्थानीयता, (२) यथार्थता और (३) लोकतन्त्रात्मकता । यहाँ प्रथम गुण के रूप में स्थानीयता बताते हुए कहा है कि- लेखक को अँचल की एक-एक बारीकी, उसके कण-कण से प्रत्यक्ष और आत्मीय सम्बन्ध; जो उसकी कृति में अँचल का सौंदर्य बनकर अभिव्यंजित होता है। "यथार्थता को आँचलिक उपन्यास का सबसे बड़ा गुण मानते हुए लिखा है कि - 'यथार्थता की हर बारीकी को उभारना, उसके प्रति निष्ठा, यथार्थ भूखण्ड के निश्चित स्थल में दैनन्दित जीवन में जो नित्य व्यवहारघटित होते हैं उनका सजग चित्रण अस्पष्ट, धुमिल वायवीय को दृढ़तापूर्वक निरसन तथा यथार्थ के साथ दृढ़ सम्पर्क....!"[५] तीसरा गुण हैं लोकतन्त्रात्मकता। इसे भी आँचलिक उपन्यास की आत्मा कहते हैं। "उसके मूल में यह विश्वास निहित होता है कि साधारण स्त्री-पुरुष भी साहित्य में निरूपण के योग्य हैं। वस्तुतः वर्तमान साहित्य की सम्पूर्ण गति इस दिशा में हैं असाधारण से साधारण की ओर । "[६] डॉ. इन्द्रनाथ मदान का मत यही है कि "उपेक्षित जीवन की ओर उपन्यासकार का उन्मुख होना देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्रात्मक विधान की स्थापना का परिणाम है ।"[७]

डॉ.प्रेम भट्टनागर ने तो आँचलिक नाम से पुकारे जाने वाले उपन्यासों को वर्णनात्मक शिल्प के उपन्यासों के अन्तर्गत रखा है। "आँचलिक कथा स्वभावतः सामाजिक है, उसकी सृजन प्रक्रिया वर्णनात्मक हैं"[८] आँचलिक उपन्यास के लिए विशिष्ट क्षेत्र होता है। आँचलिक उपन्यास का सम्बन्ध पिछड़े या अज्ञात क्षेत्र और जातियों से है । ये बाहरी सभ्यता या नागरिक जीवन के प्रभावों से अछूते या कम सम्पर्क में आये अँचल प्रायः शहेरों से दूर देहातों के है। कारण यह कि नागरी सभ्यता का प्रभाव इस पर कम है और उनकी क्षेत्रियता अखंड़ित है । इस प्रकार के समाज में वे सभी जीवन तत्व विद्यमान रहते हैं, जो इन क्षेत्रों या जातियों के अस्तित्व को बनाय रखने के लिए अपने चारों ओर के संघर्षों को झेल रहे होते हैं तथा अपने सुख-दुःख, पाप-पुण्य, छवि-नछवि, समृद्धि-अभाव आदि में जीने की अदम्य लालसा को व्यक्त कर रहे होते हैं।

हिन्दी के आँचलिक उपन्यास में इसी प्रकार के कथाँचलों को चुना है। बस्तर के गोड़ों का जीवन भारत के सामान्य जन-जीवन की तुलना में असामान्य है और इनकी संस्कृति भी भिन्न प्रकार की है। राजेन्द्र अवस्थी का 'जंगल के फूल' बस्तर के अँचल की कथा है । 'मैला आँचल' में बिहार के पूर्णिया जिले के मेरीगंज गाँव की कथा है। यह 'क्षेत्र' पर लिखा गया प्रसिद्ध उपन्यास है । हिन्दी के आँचलिक उपन्यास इन्हीं दो प्रकारों में बँटे जाते हैं, कुछ में

अँचल की जनजातियों और कुछ में अँचल क्षेत्र विशेष को लेकर लिखा गया है।

दो प्रणालियों द्वारा कथाँचल की विशिष्ट संस्कृति का उद्घाटन किया जाना चाहिए। प्रथम प्रणाली के रूप में अँचल की संस्कृति का अध्ययन। उपन्यासकार अँचल के जीवन से निकट परिचय रखता है। वह अँचल के भौगोलिक तथा सांस्कृतिक परिवेश में होने वाले कार्य-कलापों को यथाचित्र घटनाओं के रूप में लेता है और आँचलिक आवरण के भीतर ही उस जीवन का चित्र उतारता है यही अँचल को उद्घाटित करने की दूसरी प्रणाली है।

नागार्जुन 'बलचनमा' में एक युवक के जीवनमृत के माध्यम से मिथिला के सम्पूर्ण सामाजिक, ऐतिहासिक, आर्थिक व अन्य जीवन सत्यों को अभिव्यक्ति देने में समर्थ हुए हैं। रेणु की 'परती-परिकथा' अँचल को अभिव्यक्ति देने के लिए काशी का इतिहास लिखकर सांस्कृतिक परिवेश तैयार करती है और रेणु उसमें नाना कथाओं और पात्रों द्वारा आँचलिक आवरण के भीतर ही उस जीवन को अभिव्यक्ति देती है। रेणु की भावात्मक शैली इस कार्य के लिए बहुत अनुकूल सिद्ध हुई है।

आँचलिक उन्यासों की संरचना के प्रमुख विधायक तत्त्व है- नवीन कथाविन्यास, जटिल यथार्थवादी विशिष्ट पात्रों की परिवर्तित मनः स्थितियाँ, आँचलिक संदर्भों एवं स्वरों से रचित भाषा तथा बिम्बों, प्रतीकों और रंगो की अद्भुत योजना। इनके पारस्परिक रचाव में ही वस्तुतः संरचना की सफल परिणति व्याप्त है। उपन्यास एक प्राणधारी रचना के समान जीवन इकाई है, जिसके अंग-उपांग पृथक-पृथक नहीं किए जा सकते। उसके प्रत्येक अंग में अन्य अंगो का यत्किंचित अंश अवश्य निहित रहता है। "कथा के अन्तर्गत जीवन के अनेक तन्तुओं का तानाबाना बुना जाता है जो एक विशेष 'पैटर्न' बनाता है जिसमें कुछ रंग और सूत्र अधिक उभर आते हैं, परन्तु उस पैटर्न से अलग होकर नहीं, अन्य सभी से सम्बन्ध होकर ही।"[९]

सन्दर्भ सूची :

1. जैन, डॉ.नगीना, आँचलिक ता और हिन्दी उपन्यास, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-१६७६, पृ.२१ से उद्धृत
2. सिन्हा, डॉ. सुरेश, हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास, अशोक प्रकाशन दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-१६६५, पृ.२६५ से उद्धृत
3. वर्मा, डॉ.धीरेन्द्र, हिन्दी साहित्य कोश (प्रथमखण्ड), ज्ञान वाराणसी, प्रकाशन वर्ष-१६७०, पृ.१४१
4. नास्ति कुमार, समाजवादी हिन्दी उपन्यासों में चरित्रांकन, जवाहर पुस्तकालय, प्रकाशन वर्ष-१६६७, पृ.४५ से उद्धृत
5. चतुर्वेदी, डॉ.महेन्द्र, हिन्दी उपन्यास तक सर्वक्षण, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली प्रकाशन वर्ष-१६६२, पृ.१६५
6. वही, पृ.१६५
7. जैन, डॉ.नगीना, आँचलिक ता और हिन्दी उपन्यास, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-१६७६, पृ.२६
8. वही, पृ.२६
9. प्रियदर्शनी, डॉ. सुषमा, हिन्दी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-१६७२, पृ.७८